**ओ३म्**

**“अभागे देश भारत ने ऋषि दयानन्द की शिक्षाओं से लाभ नहीं उठाया”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

महाभारत काल में हुई भारी जान माल की हानि के कारण कुछ वर्षों बाद भारत ज्ञान विज्ञान को विस्मृत कर अज्ञान व अंधविश्वासों में फंस गया। लगभग पांच हजार वर्षों तक भारत में वैदिक धर्म और संस्कृति का दिन प्रतिदिन पतन होता गया। सारा देश अविद्या अन्धकार में फंस गया और लगभग बारह सौ वर्षों तक विदेशी विधर्मियों का गुलाम रहा। सन् 1947 में देश स्वतन्त्र भी हुआ परन्तु अपनी गलतियों के कारण देश के दो टुकड़े हो गये जिसमें एक पाकिस्तान बन गया। आज भी पाकिस्तान भारत के लिए सिर दर्द बना हुआ है और पूर्वी पाकिस्तान जो अब बंगला देश है, वह भी कभी कभी सिरदर्द पैदा करता रहता है। देश की इस समस्त दुरावस्था का कारण अविद्या थी। अविद्या का अर्थ है वेदों व सत्य वैदिक ज्ञान का प्रचार व प्रसार का न होना व देश के निवासियों का वेद ज्ञान से हीन व शून्य होना। इसका एक कारण हमारे देश के उच्च वर्ग जिसे पण्डित व ब्राह्मण वर्ग कहते हैं, उनका विद्या, वेद प्रचार व वेदाचरण में रूचि न लेना और स्वार्थों में संलग्न रहना भी रहा है। यदि यह वर्ग विद्या पढ़ता व पढ़ने का प्रयत्न करता तो देश की यह दुरावस्था कदापि न होती।

 सन् 1839 में देश के सौभाग्य का उदय होता है। गुजरात के टंकारा ग्राम के एक बालक मूलशंकर वा दयानन्द को शिवरात्रि के दिन बोध होता है कि पुराणों में वर्णित शिव और मन्दिर में रखी शिव की मूर्ति में परस्पर कोई समानता व एकता नहीं है। मन्दिर की मूर्ति पूर्णतः अचेतन व जड़ है और इससे प्रार्थना व स्तुति करना व्यर्थ है क्योंकि यह किसी की स्तुति न सुन सकती है और न इसमें ऐसी कोई शक्ति है जिससे यह कुछ कर सके। ऐसा निष्कर्ष ऋषि दयानन्द ने इस आधार पर निकाला था कि शिवलिंग पर चूहे उछलकूद कर रहे थे और मूर्ति उन्हें हटा नहीं रही थी। इससे एक सच्चे शिवभक्त का विश्वास नष्ट हो गया। इसके बाद परिवार में बहिन और चाचा की मृत्यु होने से उनका मन वैराग्य से भर गया और वह मृत्यु पर विजय पाने के उपायों पर विचार करने लगे। उनकी शंकाओं का समाधान आसपास के लोग नहीं कर पाये। स्वामी दयानन्द ने 22 वर्ष की अवस्था में अपने माता-पिता के सम्पन्न घर का त्याग कर दिया और योगियों व ज्ञानियों की शरण प्राप्त की और उनसे अपनी शंकाओं का समाधान करते हुए योगाभ्यास आदि सीखते रहे। उन्हें जो धर्म पुस्तक व ग्रन्थ मिल जाता था उसका वह अध्ययन करते थे। घूम घूम कर ज्ञानियों की खोज करते थे और उनसे जो ज्ञान व साधना के गुर सीख सकते थे, उन्हें प्राप्त करते थे। ऐसा करते हुए वह योग साधना में सफलता को प्राप्त हो गये। घंटो तक की समाधि उनको सिद्ध हो गई। इसके बाद भी विद्या प्राप्ति की धुन उनमें शेष थी जिसकी पूर्ति के लिए वह सन् 1860 में मथुरा में दण्डी गुरु स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी की पाठशाला में पहुंचे और उनसे शिष्यत्व प्रदान करने की प्रार्थना की। स्वामी विरजानन्द जी के सान्निध्य में तीन वर्ष रहकर कर वह वेद, वेद विद्या सहित वेद विद्या प्राप्त करने की क्षमता से सम्पन्न हो गये और कुछ वर्षों बाद ही वेदों के अपूर्व विद्वान बन गये। वेद विद्या में उनसे पूर्व व बाद आज भी कोई उनके समान विद्वान पूरे विश्व में दृष्टिगोचर नहीं होता। सन् 1863 में गुरु विरजानन्द जी से दीक्षा लेते हुए उन्होंने उन्हें वचन दिया था कि वह वेद विद्या का प्रचार कर देश से अविद्या दूर करने का प्राणपण से प्रयास करेंगे। इसके बाद उनके लगभग 20 वर्षों के अवशिष्ट जीवन में में उन्होंने देश से अविद्या का नाश करने के लिए अदभुद कार्य किये जिसके परिणाम स्वरूप देश विनाश के मार्ग से हट कर धार्मिक व सामाजिक सुधार के कार्यों की ओर अग्रसर हुआ।

 स्वामी दयानन्द ईश्वर के साक्षातकर्त्ता विद्वान व साधक थे। वेदों के अपूर्व व पारदर्शी विद्वान थे। वेदों ने सभी मनुष्यों को आज्ञा दी है कि सारे संसार में वेदों का प्रचार व प्रसार कर अज्ञान व अन्धविश्वास को दूर कर अनार्यों व अज्ञानी वेद विरोधियों को आर्य अर्थात् श्रेष्ठ मनुष्य बनाओं। स्वामी जी ने इसी कार्य को सफल करने का प्रण लिया था जिसे उन्होंने सन् 1863 में ही करना आरम्भ कर दिया था। स्वामी जी ने देश भर में घूम घूम कर वेदों का प्रचार करते हुए उपदेश करना, लोगों से मिलकर उनकी शंकाओं का समाधान करना, विरोधियों से शास्त्रार्थ करना, ग्रन्थ लेखन, आर्यसमाज की स्थापना, समाज सुधार के कार्य आदि अनेकानेक कार्य करना आरम्भ किया। उन्होंने अनेक ग्रन्थ लिखे जिनमें वेद भाष्य सहित सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय आदि ग्रन्थ मुख्य हैं। वह चाहते थे कि लोग धार्मिक व सामाजिक अन्धविश्वास व कुरीतियों को छोड़ कर सत्य ज्ञान व परम्पराओं को अपनायें। बहुत से लोगों ने उनके उद्देश्यों के अनुरूप अपने जीवन को सुधारने की स्वीकृति भी दी। अन्य मतों के लोगों को भी सत्य स्वीकार करने का आह्वान किया गया परन्तु उनके अपने स्वार्थ थे, जिसे वह छोड़ नहीं सके। स्वामी जी की मान्यता है कि वेद सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर द्वारा दिया गया ज्ञान है। इसे उन्होंने अनेक प्रमाणों और तर्कों से भी सिद्ध किया। वेद पूर्ण ज्ञान है जिसमें किसी सुधार व संशोधन की आवश्यकता नहीं है। वेद के सम्मुख सभी मत मतान्तरों के ग्रन्थ सूर्य के सम्मुख दीपक से अधिक कुछ नहीं है। दीपक भी ऐसे की जिनसे प्रदुषण और हानि होती है।

स्वामी दयानन्द जी के अनुसार ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, अनादि, नित्य जीवात्मओं के कर्मों का फल प्रदाता व उनके जन्म व मृत्यु की व्यवस्था करने वाला आदि स्वरूप वाला है। जीवात्मा संख्या में अनन्त हैं और ईश्वर पूरे ब्रह्माण्ड में एक है। जीवात्मा भी सत्य, चेतन, एकदेशी, अल्पज्ञ, अनादि, अविनाशी, अमर, शुभाशुभ कर्मों का कर्त्ता तथा अनेक योनियों में जन्म लेकर मनुष्य योनि में किये शुभाशुभ कर्मों का फल भोगने वाला है। प्रकृति सत्व, रज व तम गुणों के परमाणुओं से युक्त होती है। इसी से महतत्व, अहंकार, तन्मात्रायें व अणु आदि बन कर उनके घनीभूत होने से यह सृष्टि बनती है। ईश्वर ने अपनी यह सृष्टि रचना सप्रयोजन, जीवों के सुख-दुःख भोग के लिये बनाई है। इस आधार पर ऋषि दयानन्द जी योग दर्शन की विधि से ईश्वर के गुणों का ध्यान करने को उपासना मानते हैं। यज्ञ अग्निहोत्र का वायु व जल की शुद्धि, आरोग्य एवं विद्यावृद्धि आदि लाभों के लिए विधान करते हैं। अवतारवाद व मूर्तिपूजा को सत्य, ज्ञान, विवेक, तर्क व युक्ति के साथ वेद विरुद्ध भी बताते हैं। फलित ज्योतिष की गणना वह अविद्या के ग्रन्थों में करते हैं। इसी के कारण देश ज्ञान विज्ञान से दूर होकर गुलामी के पंक में फंसा था।

स्वामी दयानन्द जी वेदाधारित गुण, कर्म और स्वभाव पर वर्ण व्यवस्था के समर्थक और जन्मना जातिवाद को अनुचित, हानिकारक व वेद विरुद्ध मानते थे। मृतक श्राद्ध भी अज्ञान पर आधारित एक कुप्रथा है जिससे समाज को हानि होती है। स्वामी दयानन्द जी ने जीवन को उन्नत करने के लिए वेदाध्ययन सहित ऋषियों के ग्रन्थों, दर्शन, उपनिषद, मनुस्मृति आदि, के अध्ययन की प्रेरणा सभी मनुष्यों को दी है। वह अन्य मतों के ग्रन्थों के पढ़ने की आवश्यकता नहीं समझते थे परन्तु फिर भी उन्होंने अन्य मतों के समान उन्हें पढ़ने का निषेध नहीं किया। देश की आजादी के वह समर्थक थे और इसके लिए उन्होंने अपने ग्रन्थों में विचार व्यक्त किये हैं और अंग्रेजों के किसी प्रकार के दण्ड की भी परवाह नहीं की। वस्तुतः देश को आजाद कराने का मूल मन्त्र सर्वप्रथम उन्होंने ही दिया। उनके सभी ग्रन्थों में सुराज्य की रूपरेखा प्रस्तुत की गई है। सभी मतों के अन्धविश्वासों व अविद्या ये युक्त मान्यताओं का भी उन्होंने प्रकाश वा खण्डन किया है। वह सच्चे मनुष्य, विद्वान, योगी, ऋषि, मानवता से प्रेम करने वाले, सच्चे ईश्वर भक्त व देशभक्त थे। यदि स्वामी दयानन्द जी की इन बातों को संसार के लोग स्वीकार कर लेते तो विश्व में सर्वत्र सुख व शान्ति होती परन्तु अज्ञानी व स्वार्थ प्रकृति के धर्माचार्यों ने उनकी सत्य वैदिक मान्यताओं पर विचार ही नहीं किया। सत्य का खण्डन विरोधी मतों के आचार्यों द्वारा नहीं किया जा सका परन्तु सत्य को उन्होंने स्वीकार भी नहीं किया। इससे अनुमान होता है कि उनका अज्ञान व स्वार्थ ही वेद को स्वीकार न करने में प्रमुख कारण है।

ऋषि दयानन्द जी ने अपने जीवन में विलुप्त वेद व वैदिक ज्ञान का पुनरुद्धार कर एक महनीय व अपूर्व कार्य किया है जिस कारण सारा संसार उनका ऋणी है। उन्होंने जो कार्य किये उसकी तुलना में अन्य विद्वानों व महापुरुषों के कार्य हीन व न्यून है। ऋषि दयानन्द द्वारा प्रस्तुत वैदिक विचारधारा को अपनाकर ही मनुष्य जीवन में अभ्युदय व मृत्यु के बाद जन्म व मरण से अवकाश वा मुक्ति एवं मोक्ष को प्राप्त किया जा सकता है। यह लाभ अन्य मतों व अन्य विचारधारा पर चलकर प्राप्त नहीं हो सकता। दर्शन ग्रन्थो का अध्ययन इस मान्यता की पुष्टि करता है। ऋषि दयानन्द ने जिस आध्यात्मिक ज्ञान को प्रस्तुत किया है उसी के कारण अतीत में भारत विश्व गुरु था व आज भी है। वेद, दर्शन व उपनिषद संसार के अनुपम व अपूर्व ग्रन्थ है और इन्हीं के समान सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि सहित ऋषि दयानन्द और आर्य विद्वानों के वेदभाष्यों का भी महत्व है। संसार व भारत के लोगों ने वेद और ऋषि दयानन्द की सत्य व न्यायपूर्ण वैदिक मान्यताओं से लाभ न उठा कर अपनी ही अपूरणीय हानि की है। हमें लगता है कि संसार में जब तक मत-मतान्तर रहेंगे, उनके आचार्य अपने अपने अनुयायियों को सत्य की ओर जाने नहीं देंगे। आज कोई भी मताचार्य सत्य के निर्णयार्थ शास्त्रार्थ व वादविवाद की चुनौती न देता है और न स्वीकार करता है। जिस प्रकार सृष्टि के जड़ पदार्थों के गुणों को ही उनका धर्म कहा जाता है उसी प्रकार मनुष्यों का धर्म भी एक है जिनमें परस्पर विरोधी मान्यताओं नहीं हो सकती। हमें लगता है कि ऋषि दयानन्द जी ने जो मर्यादायें व व्यवस्थायें स्थापित की हैं वह सत्य व अन्तिम हैं। यदि संसार को सत्य पर आना है तो उन्हें वेद व वैदिक धर्म की शरण में ही आना होगा। विश्व में वेद का विकल्प नहीं है। विज्ञान के युग में अधिक समय तक लोगों को मूर्ख बनाये नहीं रखा जा सकता। इसी के साथ लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**